ओ३म्

विपश्यना ध्यान-प्रक्रिया

वर्तमान में अनेक प्राकृतिक चिकित्सालयों में विपश्यना का ही प्रचार व प्रभाव निकटता से देखा जा सकता है। आज विश्व में ध्यान की अनेक पद्धतियाँ प्रचलित हैं। पाश्चात्य भोगवादी देशों में भी ध्यान (मेडिटेशन) के प्रति जागरूकता हम सूचना माध्यमों में पढ़ते वा सुनते रहते हैं। भारत में हिन्दू समाज में अनेक कथित धर्मगुरु अपने-2 ढंग से ध्यान के शिविर आयोजित करते हैं। इन सब पर विचारने से यह निष्कर्ष निकलता है कि ध्यान की ये सभी पद्धतियाँ शरीर और अधिक से अधिक मन के स्वास्थ्य के प्रयोजन तक ही सीमित हैं। आज सम्पूर्ण विश्व विभिन्न प्रकार की शारारिक व्याधियों तथा चिन्ता, अवसाद, अशान्ति व तनाव जैसी मानसिक व्याधियों से ग्रस्त है। यद्यपि इन सब रोगों का कारण मनुष्य का आहार, विहार एवं प्रारब्ध है और इनका भी मूल कारण (विशेषकर आहार एवं विहार का) अज्ञानता है। इस अज्ञानता के कारण अर्थात् विवेक ज्ञान के अभाव में मनुष्य स्वयं अपने दु:खों को उत्पन्न करता है। असत्य, हिंसा, द्वेष, कामासक्ति ये सभी विवेक ज्ञान के अभाव में ही उत्पन्न होते हैं, परन्तु वर्तमान भोगवादी मनुष्य ऐसे किसी पाप को बिना त्यागे ही उत्तम स्वास्थ्य और मानसिक शान्ति प्राप्त करने का यत्न करने के लिए अनेक प्रकार की ध्यान पद्धतियों का आश्रय लेता है और इसके लिए सभी सम्प्रदाय और कथित धर्मगुरु अपने-2 व्यवसाय स्थापित करके विश्वभर में बैठे हैं। वे मानव की इस दुर्बलता को भली-भाँति समझते हैं कि मानव पाप करते हुए भी शान्ति और स्वास्थ्य की कामना करता है, ताकि और भी अधिक भोगों को भोग सके।

इसी कारण इन ध्यान पद्धतियों में वैदिक पातञ्जल योग पद्धति के समान यम (अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह), नियम (शौच, सन्तोष, तप, स्वाध्याय, ईश्वर-प्रणिधान) की आधारशिला नहीं होती, इसी कारण सत्य, अहिंसा, ब्रह्मचर्य जैसे महान् आदर्शों को लेकर चले महात्मा बुद्ध के अनुयायी बौद्धमत मानने वाले देश इन सारे पापों में लिप्त दिखाई देते हैं। यद्यपि वेदमत के विकृत अनुयायी हिन्दू समाज में भी मांसाहार का प्रचलन बहुत अधिक है, परन्तु फिर भी संसार में सभी सम्प्रदायों की अपेक्षा इसी में मांसाहार का प्रचलन सबसे कम है। यहाँ हम जैन मत को हिन्दू के साथ जोड़कर यह बात लिख रहे हैं। विशुद्ध वैदिक मत का प्रबल प्रस्तोता आर्यसमाज भले ही महर्षि दयानन्द सरस्वती के उपदेशों पर पूर्णतः नहीं चल पा रहा, पुनरपि संसार में कोई भी आर्यसमाजी मांसाहारी नहीं होगा। यदि कोई छुपा हुआ हो भी, तो उसे आर्यसमाज स्वीकार नहीं करेगा। इसी प्रकार जैन मत को भी समझें। जो-2 मत वेद से जितना-2 निकट रहा, उतना-2 अधिक वह मांसाहार से दूर रहा। इधर विपश्यना ध्यान से सिद्ध लामाओं को भी मांसाहार से कोई परहेज नहीं है, बल्कि मांसाहार उनका स्वाभाविक भोजन बना हुआ है, ऐसा सुना है। इस पर किसी विपश्यना शिक्षक वा साधक ने हमारे एक कार्यकर्त्ता से कहा- कि लामाओं का स्तर विपश्यना के अभ्यास से इतना उच्चतर वा उच्चतम हो जाता है, जहाँ मांसाहार और शाकाहार में समदृष्टि हो जाती है।

आश्चर्य है कि जो गोतम बुद्ध संसार के दुःखों को देखकर उन दुःखों को दूर करने का उपाय करने के लिए ही संसार से विरक्त हुए थे और अहिंसा को अपना प्रमुख आधार बनाया था, उन्हीं महान् बुद्ध के अनुयायी विश्व शान्ति की बात करने वाले लामा जैसे कथित सिद्ध पुरुष निरीह प्राणिओं को मारकर खाने में

अपनी समदृष्टि मानते हैं और सारा बौद्ध समुदाय इन मूक प्राणियों की चीत्कारों को मधुर संगीत मानकर आनन्द लेता हुआ अपने उदरों को श्मशान बना रहा है। उन्हें भगवान् बुद्ध के करुणा, दया, अहिंसा, प्रेम जैसे आदर्शों की हत्या करने में कोई संकोच नहीं होता। अगर उनके आत्मा में कभी भगवान् बुद्ध के आदर्श धिक्कारें भी, तो उनका विपश्यना केवल श्वास-प्रश्वासों में उलझा हुआ, उन धिक्कार और चीत्कारों को परे हटाकर उन्हें मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य और शान्ति के स्वार्थ में ही जकड़े रहता है। उसे निर्दोष प्राणियों के दु:ख से कोई सरोकार नहीं है। इस प्रकार यह भगवान् बुद्ध की प्रथम हत्या है, जिसके पाप को विपश्यना के द्वारा ही भुलाया जा रहा है। यद्यपि जैन मत और बौद्धमत दोनों परस्पर सर्वाधिक निकट हैं, लेकिन जैन मत भारत तक सीमित रहने के कारण ही इस घोर पाप से बचा हुआ है और बौद्धमत विदेशों में जाने के कारण भ्रष्ट हो चुका है। आश्चर्य तो यह है कि इसको वह भ्रष्टता मानता ही नहीं है, बल्कि विपश्यना की सिद्धि मानता है।

अहिंसा के पश्चात् महात्मा बुद्ध का आदर्श सत्य भी था। वे वेद और ब्राह्मण के विरोधी नहीं, बल्कि समर्थक थे। हाँ, वेद वा ब्राह्मणत्व के नाम पर पाप और पाखण्ड के प्रबल विरोधी थे। उनके समय में वेदों का यथार्थ स्वरूप लुप्त हो चुका था। इस कारण वे वेद के विशेष ज्ञाता नहीं थे, परन्तु धम्मपद में वेद और सच्चे ब्राह्मण तथा आर्यों की बहुत प्रशंसा की है। उन्होंने सच्चे ब्राह्मण के लक्षण भी बताये हैं, ऐसा होने पर भी बौद्धमत कैसे व कब से वेद और ब्राह्मण का प्रबल विरोधी हुआ, यह विचारणीय विषय है। क्यों बौद्धमत वेद, यहाँ तक कि अपने प्रवर्तक महात्मा बुद्ध के मूल विचारों का विरोधी बन बैठा, यह वर्तमान बौद्ध ही जानें। वेद का जो विकृत स्वरूप गोतम बुद्ध के समक्ष उपस्थित

था, उससे भी अधिक विकृत स्वरूप महर्षि दयानन्द सरस्वती के सम्मुख भी था, परन्तु महर्षि दयानन्द और उनके अनुवर्ती आर्य विद्वानों ने वेदों का यथार्थ और पवित्र स्वरूप प्रस्तुत करते हुए वेद का विकृत स्वरूप प्रस्तुत करने वालों को खुली चुनौती दी और इसमें सदैव विजयी भी रहे। यह कार्य गोतम बुद्ध नहीं कर सके तथा वे वेद विषय में प्राय: मौन रहे और यदि कुछ बोले, तो वेद और आर्य धर्म की प्रशंसा ही की। उनके अनुयायियों में कदाचित् इतना बौद्धिक सामर्थ्य ही नहीं था कि वे उन प्रशंसा संकेतों को समझ भी सकें। इन पंक्तियों का लेखक स्वयं भी महर्षि दयानन्द सरस्वती एवं प्राचीन महर्षि भगवन्तों के संकेतों के आधार पर वेद के उस स्वरूप को संसार के वैज्ञानिकों के समक्ष रख चुका है, जिससे आधुनिक विज्ञान वेद की ईश्वरीयता और सर्वविज्ञानमयता को स्वीकार करने को बाध्य होगा तथा अपनी कई जटिल समस्याओं का समाधान करने में भी वैदिक विज्ञान से प्रेरणा ले सकेगा।

हा हन्त! यहाँ भी बौद्धमत ने वेद जैसे सत्य के मूल आधार ग्रन्थ का विरोधी बनकर न केवल ज्ञान और विवेक से भ्रष्ट होने का काम किया है, अपितु अपने ही धर्मग्रन्थ धम्मपद के वचनों की भी हत्या की है। आज भारत का कथित दलित वर्ग, जो बौद्धमत की ओर आकृष्ट हो रहा है, वह वेद, ऋषियों एवं भारतीय संस्कृति का प्रबल विरोधी भी बन रहा है। वह कभी-2 इसके साथ-2 विदेशी आक्रमणकारियों का भी सदैव समर्थन करता है, ऐसा उनके विशेषकर, बामसेफ का साहित्य पढ़ने से स्पष्ट हो जाता है। क्या यह भगवान् बुद्ध के आदर्शों के अनुकूल है? देश की स्वतंत्रता में कितने क्रान्तिकारी बौद्ध थे? क्या यह कोई बतायेगा? कितने विपश्यना साधक राष्ट्र यज्ञ में अपने को आहुत कर गये? यह भी कोई बताए। दलित वर्ग हिन्दुओं की पापिनी

छुआछुत के दंश से त्रस्त होकर बौद्धमत की ओर आकृष्ट होकर वैदिक धर्म, संस्कृति व भारतीय गौरव से दूर ही नहीं, अपितु घोर विरोधी भी होता जा रहा है, तो अन्य बचे हिन्दुओं को अपनी ओर आकृष्ट करने हेतु स्वास्थ्य की आड़ में इनका विपश्यना सक्रिय है। मानव जीवन के यथार्थ से अनभिज्ञ तथा वैदिक भारतीय आदर्शों के प्रति दुर्भावनाओं वाले अविवेकी मात्र स्वास्थ्य के स्वार्थ में फँसकर पूर्णता को त्यागकर अपूर्णता की राह पकड़ रहे हैं। पहले, बौद्धमत अहिंसा को भूला और अब सत्य को भी, तब सत्य के बिना इनके प्रज्ञा, ज्ञान, और समाधि कैसे सिद्ध होंगे? जिस सम्यक् दृष्टि और सम्यक् ज्ञान की ये बात करते हैं, वह सत्य वेद के बिना कैसे सम्भव है? आश्चर्य है कि पहले तो विपश्यना सिद्धों का ऐसा विवेक भ्रष्ट हुआ कि उनको शाक और मांस में भेद ही नहीं दिखायी देता। करुणा और क्रूरता में अन्तर प्रतीत नहीं होता। इसके बाद इस विपश्यना ने हजारों वर्षों में इतना भी विवेक नहीं जगाया कि उन्हें ईश्वर-अस्तित्व और उसके वेद ज्ञान का किञ्चित् भी बोध हो सके, तब क्या विपश्यना केवल विवेकहीनता को पाने का ही सोपान है? इन पंक्तियों का लेखक विश्व के किसी भी व्यक्ति, चाहे वह कितनी ही वैज्ञानिक मेधा का धनी क्यों न हो, के समक्ष ईश्वर तत्व की सिद्धि वैज्ञानिक युक्तियों से ही करने का दावा करता है, परन्तु शोक! विपश्यना यहाँ भी लोगों का मार्ग भ्रष्ट कर रहा है, जो लोगों को ईश्वर के ध्रुव सत्य, उसकी कर्मफल व्यवस्था व वेद से विमुख कर रहा है। यद्यपि जैन मत भी अपनी ध्यान पद्धतियों से ईश्वर तत्व को समझने व स्वीकारने का विवेक अब तक नहीं जगा सका, परन्तु वह बौद्धमत की भाँति क्रूर मांसभक्षी नहीं हुआ, यह कुछ सन्तोष की बात है।

अब मैं भगवान् बुद्ध के ब्रह्मचर्य आदर्श की भी कुछ चर्चा करना चाहूँगा। बौद्धमत प्रधान देश थाईलैंड विषयासक्ति, कामुक-दुराचार के लिए विश्व-कुख्यात है। क्या यहाँ इस पाप की भी बौद्धमत अनुशंसा करता है? क्या वे दुराचारी नर-नारी विपश्यना के द्वारा अधिक से अधिक भोगशक्ति अर्जित करने का प्रयास करते हैं? मैं यह इनसे ही जानना चाहता हूँ कि क्या यह बौद्धमत को स्वीकार है? क्या विपश्यना सिद्धों की सिद्धि इस पाप और ब्रह्मचर्य में भी भेद भूल जाती है? मैं इस विषय में लेशमात्र भी आरोप नहीं लगा रहा, बल्कि यही जानना चाह रहा हूँ कि बौद्ध देशों में बौद्धमत में इस समय ब्रह्मचर्य और जितेन्द्रियता पर उपदेशों की क्या स्थिति है? थाईलैंड में जो हो रहा है, उसको रोकने के लिए क्या बौद्धमत के प्रचारक कोई प्रयास करते हैं? क्या उन्हें विपश्यना के द्वारा ब्रह्मचर्य व्रत पालन करने के लिए कोई सामर्थ्य प्राप्त करने का यत्न करवाते हैं? आशा है विपश्यना गुरु इन प्रश्नों का उत्तर देने का कष्ट करेंगे। सत्य और अहिंसा को प्राप्त करने में, मैं विपश्यना को सर्वथा विफल सिद्ध करने के पश्चात् ब्रह्मचर्य विषय में मैं केवल आपसे जानकारी ही चाहता हूँ। ध्यातव्य है कि विपश्यना से प्रभावित वा ध्यान के नये-2 कुछ आडम्बरी ओशोमत व सन टू-ह्यूमन में युवा व युवतियों की एक साथ उछलकूद व नाच-गान कराके स्वास्थ्य की मरीचिका में लोगों को आकृष्ट करते हैं। यह मरीचिका युवा पीढ़ी को वर्तमान में बड़ी आकर्षक लगती है, इस कारण इनकी दुकानें खूब फल-फूल रही हैं। इनमें ब्रह्मचर्य की क्या दिशा व दशा है, ये ही जानते होंगे। ओशो का दुश्चरित्र तो लोकविख्यात था ही, परन्तु उसका नाम ले लेकर ध्यान सिखाने व सीखने वालों को लेशमात्र भी लज्जा नहीं।

शारीरिक और मानसिक सुख-शान्ति एवं स्वास्थ्य जंगल में रहने वाले जंगली जानवरों को भी सहज सुलभ है। जंगली प्राणी जितने स्वस्थ और मानसिक तनावों से दूर रहते हैं, वैसा मनुष्य बहुत यत्न करने पर भी नहीं हो सकता है। वे यह शान्ति ईश्वर द्वारा निर्धारित आहार-विहार तथा बुद्धि-मन्दता के कारण ही अर्जित करने में समर्थ होते हैं। वे इसके लिए कोई ध्यान नहीं करते। कोई मन्दबुद्धि अथवा पागल व्यक्ति भी अपने को मानसिक चिन्ताओं से मुक्त रखता है और ऐसे व्यक्तियों को गन्दा खानपान-रहन सहन होने पर भी शारीरिक रोग सामान्य मनुष्य की अपेक्षा बहुत कम होते हैं। तब क्या ये लोग यह बताना चाहेंगे कि जंगली प्राणी, पागल मनुष्य का बुद्धिमान् मनुष्य से भेद क्या है? कौनसी वस्तु ऐसी है, जो मनुष्य योनि को सबसे श्रेष्ठ बनाती है? यदि स्वास्थ्य और शान्ति है, तो इसमें जंगली प्राणी हमसे आगे हैं। भले ही हम कितना ही विपश्यना ध्यान आदि क्यों न करें। हमारी दृष्टि में विवेक, बुद्धि ही मनुष्य के पास वह वस्तु है, जो उसे सबसे श्रेष्ठ बनाते हुए मुक्तिपथ तक ले जाती है, जो हिंसा, असत्य, कामुकता, ईर्ष्या, द्वेष आदि पापों से मनुष्य को मुक्त रख सकती है। यद्यपि शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य, शान्ति प्रत्येक मनुष्य के लिए बहुत आवश्यक है, जिसके लिए उचित, आहार-विहार, औषधि, प्राणायाम-ध्यान, व्यायाम सबका आश्रय लेना चाहिए, परन्तु ध्यान का उद्देश्य केवल इतना ही रहा, तो हम जंगली प्राणी से अधिक कुछ बन नहीं सकते। इसलिए वैदिक पातञ्जल योग और ध्यान में यम-नियमों से नींव प्रारम्भ होती है और ज्ञान और विवेक की पराकाष्ठा रूपी समाधि पर समाप्त होती है। यही पद्धत्ति है, जिसके माध्यम से महर्षि ब्रह्मा से लेकर दयानन्द पर्यन्त ऋषि-भगवन्तों ने सम्पूर्ण मानव जाति ही नहीं, अपितु प्राणिमात्र को पूर्ण सुखी करने का मार्ग सुझाया है। इस मार्ग का पथिक केवल अपने लिए नहीं, अपितु समस्त प्राणिजगत् की भलाई के लिए जीता है।

संसार में केवल यही पद्धति है, जो विशुद्ध भारतीय होते हुए भी सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड भर के जीवों के लिए समानरूप से हितकारिणी है, क्योंकि यह ईश्वर-प्रणीत वेद द्वारा प्रसूत है। यदि यह कहा जाए कि विपश्यना मन की एकाग्रता का सर्वोत्तम उपाय है। इस विषय में मेरा मत है कि मन की एकाग्रता यदि बिना यम व नियम के उच्च आदर्शों तथा ईश्वरीय पवित्र आस्था व उच्च विवेक के अभाव में होती है, तो उसका फल गहरी नींद की एकाग्रता से अधिक नहीं होता। गहरी नींद के समान विपश्यना की एकाग्रता भी स्वास्थ्य हेतु अच्छी रहेगी। इस एकाग्रता से अत्याचारी, दुराचारी, चोर, हिंसक भी अपने-2 पापों को पुष्पित व फलित करने हेतु स्वस्थ रह सकेंगे। उधर वैदिक ध्यान की एकाग्रता की सिद्धि के पूर्व ही पापी अपने पापों को अवश्य ही छोड़ देंगे। **मुझे पापी स्वस्थ से अधिक रोगी पुण्यात्मा अधिक प्रिय हैं।** आपका विकल्प आप ही जानते होंगे।

यदि केवल स्वास्थ्य की भी बात करें, तो मैंने किसी भी प्रसिद्ध प्राकृतिक चिकित्सक को ऐसा नहीं देखा, जिसने पैतृक अस्थमा आदि रोगों को केवल विपश्यना द्वारा दूर करने का दावा किया हो। मुझसे बातचीत के पश्चात् मुझे किसी चिकित्सक ने विपश्यना करने का आग्रह भी नहीं किया, जबकि यह प्राकृतिक चिकित्सालयों की नियमित दिनचर्या का एक भाग है। इसके विपरीत उन्होंने इस बात पर आश्चर्य ही व्यक्त किया कि कैसे मैं प्राकृतिक-आयुवैदिक-यौगिक चिकित्सा को अपनाकर उस दमा को दूर कर सका, जो 19 वर्ष की किशोरावस्था में भयानक रुप से प्रकट हुआ और 52 वर्ष की अवस्था में नहीं रहा। यदि प्राकृतिक जीवन, जिसे पशुओं से सीखने का आग्रह किया जाता है, पर चला जाये तो निश्चित ही अधिक स्वस्थ रहा जा सकता है, यथा- नींद आने पर अवश्य सोना और जब तक स्वयं नींद न

खुले तब तक सोते रहना, दिन और रात का विचार न करना, थोड़ी थकान होने पर ही विश्राम करना, भूख लगने पर इच्छानुसार खाना। इनसे स्वस्थ तो रहा जा सकता है, परन्तु ऐसा करने वाले संसार की भलाई के लिए कुछ भी समय नहीं निकाल सकते, क्योंकि वे तो सोते-जागते और ध्यान करते समय भी अपनी ही सुख-शान्ति का ध्यान रखते हैं और ऐसा करना ही पशुता है। एक अन्य बात यह भी है कि ऐसे विवेकहीन साधक राष्ट्र में हो रहे अन्याय, अत्याचार एवं अज्ञान के प्रति मूकदर्शक बने रहते हैं, वे पशुओं को तो क्रूरतापूर्वक मारकर खाना तो जानते हैं, परन्तु देश में हो रहे अत्याचारों का विरोध करने में मिथ्या अहिंसा को बाधा समझते हैं। यही कारण है कि भारत में जब से बौद्धमत का उदय हुआ, उनकी मूर्खतापूर्ण अहिंसा को देखकर विदेशी आक्रमणकारी यहाँ रक्तरंजित ताण्डव करने लग गये और बौद्ध धर्मगुरु मूकदर्शक बने और भारत के लोगों को भी ऐसा बनाये रहे। आज ऐसे मूकदर्शक कुछ विपश्यना साधक भी देखे जाते हैं, जिनके अन्दर भारत में हो रहे वा होते रहे अत्याचारों के विरुद्ध तनिक भी मन्यु (आक्रोश) उत्पन्न नहीं होता है। उन्हें राष्ट्र को विनाश से बचाने हेतु क्रान्ति की बात सुननी भी अच्छी नहीं लगती। वे राष्ट्र-धर्म से विरक्त अपनी मस्ती में रहते हैं। वे देश की एकता, अखण्डता और स्वतन्त्रता के नष्ट होने के दारुण-दु:ख को सहन करने में ही अपनी सिद्धि व सुख-शान्ति मान लेते हैं। यदि ऐसी भ्रामक मान्यतायें और मतों का प्रादुर्भाव इस भारत में नहीं होता, तो भारत कभी पराधीन, निर्धन और पतित नहीं होता। मुझे भय है कि ऐसी अवैदिक एवं अपूर्ण ध्यान-पद्धतियाँ भारतीय गौरवमय, इतिहास, संस्कृति और ज्ञान-विज्ञान को मिटाने का षड्यन्त्र तो नहीं हैं? अथवा इनकी नादानी से भारत का सनातन गौरव नष्ट तो नहीं हो जायेगा? मैं सभी देशवासियों को इस विषय पर गम्भीरता से

विचार करने के लिए सादर आग्रह करता हूँ। ईश्वर सबको सुमति प्रदान करे। इसी आशा के साथ...

जय माँ वेदभारती

-आचार्य अग्निव्रत नैष्ठिक
अध्यक्ष, श्री वैदिक स्वस्ति पन्था न्यास
(वैदिक एवं आधुनिक विज्ञान शोध संस्थान)
वेद विज्ञान मन्दिर, भागलभीम, भीनमाल (राज.)